



छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर
दाण्डिक अपील क्रमांक 158/2021

1- पप्पू गायकवाड़ पिता माया राम गायकवाड़, आयु लगभग 24 वर्ष, निवासी- चोरभट्टी, थाना - खरोरा जिला - रायपुर छत्तीसगढ़

... अपीलार्थी (गण)

विरुद्ध

1- छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा: थाना प्रभारी, थाना- खरोरा जिला - रायपुर छत्तीसगढ़

... उत्तरवादी(गण)

अपीलार्थी की ओर से : सुश्री मोनिका डे, अधिवक्ता

उत्तरवादी/राज्य की ओर से : सुश्री प्रज्ञा श्रीवास्तव, उप-शासकीय अधिवक्ता

(माननीय न्यायमूर्ति श्री अरविंद कुमार वर्मा)

बोर्ड पर निर्णय

15/01/2025

यह अपील विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, प्रथम फास्ट ट्रैक विशेष न्यायाधीश, रायपुर जिला रायपुर (छ.ग.) द्वारा विशेष सत्र विचारण क्रमांक 125/2017 में दिनांक 02.03.2020 को पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके अन्तर्गत अपीलार्थी को अपराध कारित करने हेतु निम्नानुसार सिद्धदोष किया गया है:

दोषसिद्धि	दण्डादेश
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363 के अधीन	2 वर्ष का कठोर कारावास एवं 500/- रुपए का अर्थदण्ड , अर्थदण्ड के संदाय के व्यतिक्रम पर 15 दिवस का अतिरिक्त कठोर कारावास
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 366 के अधीन	3 वर्ष का कठोर कारावास एवं 1,000/- रुपए का अर्थदण्ड , अर्थदण्ड के संदाय के व्यतिक्रम पर 1 माह का अतिरिक्त कठोर कारावास
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(2) (ढ़) के अधीन	दस वर्ष का कठोर कारावास एवं 5,000/- रुपए का अर्थदण्ड , अर्थदण्ड के संदाय के व्यतिक्रम पर 3 माह का अतिरिक्त कठोर कारावास
समस्त दण्डादेशों को साथ-साथ चलाए जाने हेतु निर्देशित किया गया है ।	



2. अभियोजन का प्रकरण संक्षिप्त में यह है कि दिनांक 21.03.2017 को शाम लगभग 6.00 बजे पीड़िता को अपीलार्थी द्वारा बहला-फुसलाकर ले जाया गया। दिनांक 23.03.2017 को तलाशी ली गई, उसे अपीलार्थी के कब्जे से गांव नवगांव में बरामद किया गया। पूछताछ करने पर उसने बताया कि अपीलार्थी उसे मोटरसाइकिल पर राजकुमार गायकवाड़ के घर ले गया और दिनांक 21.03.2017 से 22.03.2017 तक उसके साथ लैंगिक संबंध बनाए। लिखित रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी और सह-अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363, 366, 368 व 376 और पोक्सो की धारा 4 के अधीन अपराध हेतु प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई। प्रकरण की सुनवाई के उपरांत विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363, 366 व 376 (2) (ढ़) और लैंगिक अपराधों से बालकों के संरक्षण अधिनियम की धारा 6 की सहपठित धारा 17 के अधीन आरोप विरचित किए।

3. प्रकरण को सुनवाई हेतु विद्वान सप्तम अपर सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक कोर्ट), रायपुर को उपार्पित किया गया। अपीलार्थी ने अपना अपराध अस्वीकार किया एवं विचारण चाहा।

4. अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप साबित करने हेतु अभियोजन ने 9 साक्षियों का परीक्षण कराया है। अपीलार्थी का दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन कथन दर्ज किया गया था, जिसमें उसने अपने विरुद्ध प्रस्तुत साक्ष्य से इनकार किया और प्रकरण में स्वयं को निर्दोष और झूठे आरोप में फँसाए जान का अभिवाक किया। अपीलार्थी की ओर से दो बचाव साक्षियों का परीक्षण कराया गया है।

5. अभिलेख पर प्रस्तुत मौखिक व दस्तावेजी साक्ष्य की विवेचना करने के उपरांत, विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को सिद्धदोष किया और उसे निर्णय के पैरा 1 में उल्लिखित दण्डादेश दिया। अतः यह अपील प्रस्तुत की गई है।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि अपीलार्थी निर्दोष है तथा उसे प्रकरण में झूठा फंसाया गया है। उनका तर्क है कि अपीलार्थी और अभियोक्त्री एक दूसरे से परिचित थे तथा विगत 2-3 वर्षों से उनके मध्य प्रेम संबंध थे तथा वे एक दूसरे को पत्र लिखा करते थे तथा मोबाइल पर भी बात किया करते थे। अभियुक्त/अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि अभियोजन के प्रकरण के अनुसार पीड़िता घटना दिनांक को अवयस्क थी, परंतु यह तथ्य विधिसम्मत साक्ष्य प्रस्तुत करके साबित नहीं किया जा सका है। इस संबंध में पीड़िता का विद्यालय दाखिल खारिज पंजी (प्र.पी.-12) जब्त किया गया है, जिससे ज्ञात होता है कि पीड़िता की जन्म तिथि 10.08.2002 है, किंतु अभियोक्त्री की आयु के संबंध में कोई विधिसम्मत साक्ष्य नहीं है कि घटना दिनांक को वह अवयस्क थी तथा उसकी आयु 18 वर्ष से



कम थी। विद्यालय दाखिल खारिज पंजी के लेखक के परीक्षण के अभाव में अभियोक्त्री की आयु अवधारण हेतु इसे विचार में नहीं रखा जा सकता है। उनका आगे तर्क है कि पीड़िता के अतिरिक्त, उसके कथन के समर्थन में कोई विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है और इसलिए, केवल पीड़िता के कथन के आधार पर विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी की दोषसिद्धि संधारणीय नहीं है और अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दण्ड संहिता और पोक्सो अधिनियम के कथित अपराध नहीं बनते हैं, अतः वह दोषमुक्ति का पात्र है।

7. इसके विपरीत, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि पीड़िता अवयस्क थी और उसकी साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है क्योंकि उसके पास अपीलार्थी को झूठा फंसाने का कोई कारण नहीं था। उनका आगे तर्क है कि पीड़िता की एकमात्र साक्ष्य के आधार पर ऊपर वर्णित अपराध के लिए अभियुक्त की दण्ड के संबंध में प्रतिपादित विधि माननीय उच्चतम न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के दृष्टिगत एक सुस्थापित प्रस्ताव है। अंत में, उनका तर्क है कि पीड़िता/अभियोक्त्री की स्पष्ट विश्वसनीय और अखंड साक्ष्य अभियोजन के प्रकरण को साबित करने के लिए पर्याप्त है और यह विश्वसनीय है। अपीलार्थी की ओर से बताए गए विरोधाभासों को साक्षियों के मौखिक साक्ष्य को बदनाम करने के लिए असंगत बताया गया है। अतः विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय उचित था और इसमें किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं थी।

8. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना गया तथा उनके द्वारा उपरोक्त प्रस्तुत परस्पर विरोधी तर्कों पर विचार किया गया तथा साथ ही विचारण न्यायालय के मूल अभिलेखों का भी अत्यंत सावधानी एवं सतर्कतापूर्वक परिशीलन किया गया।

9. अभियोक्त्री की आयु पर विचार करने हेतु, हमने अभियोजन द्वारा प्रस्तुत अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का परीक्षण किया है।

10. अभियोजन ने मुख्य रूप से विद्यालय दाखिल खारिज पंजी का अवलंब लिया है जिसमें अभियोक्त्री की जन्म तिथि 10.08.2002 दर्शायी गई है।

(अ.सा.-1) अभियोक्त्री का कथन है कि वह अपीलार्थी और सह-अभियुक्त को जानती थी और वे उसके भाई के मित्र थे इसलिए वे प्रायः उनके घर आते-जाते थे। उसकी जन्म तिथि 10.08.2002 है और घटना दिनांक 21.03.2017 को उसकी आयु लगभग 14 वर्ष थी। उसने कथन किया है कि शाम को लगभग 6.00 बजे उसने अपने मोबाइल पर अपीलार्थी से बात की थी और उसके बाद वह खेत के पास आया और उसे अपनी बाइक में बैठने के लिए कहा और जब उसने बैठने से इनकार



कर दिया तो उसने उसे धमकाया। वह बाइक पर बैठ गई और अपीलार्थी उसे गांव नवगांव में अपने भाई राजकुमार गायकवाड़ के घर ले गया जहां अपीलार्थी ने उसके साथ कई बार बलात्संग किया। दिनांक 23.03.2017 को उसके पिता और भाई उस समय उसकी तलाश में आए, उसके भाई राजकुमार ने इनकार किया कि वह वहां नहीं है, यद्यपि बाद में उसे वहां से बरामद किया गया। पुलिस वाले उन्हें थाना खरोरा ले गए जहाँ उनकी सहमति प्र.पी-1 ली गई और प्र.पी-2 नजरी नक्शा तैयार किया गया। प्र.पी-3 नजरी नक्शा तैयार किया गया। बाल कल्याण समिति और न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा प्र.पी-4 और प्र.5 द्वारा कथन दर्ज किए गए, पुलिस ने प्र.पी-6 द्वारा उनके अंतरवस्त्र जब्त किए।

11. (अ.सा.-2) अभियोक्त्री के पिता ने अपने कथन में व्यक्त किया है कि अभियोक्त्री की जन्म तिथि 10.08.2002 है। उनका कथन है कि घटना की तिथि अर्थात् 21.03.2017 को जब उनकी पुत्री नहीं मिली तो उन्होंने सरपंच को सूचित किया और उसके बाद उसे बरामद किया गया। उनका आगे कथन है कि जब उन्होंने अपनी पुत्री से घटना के विषय में पूछा तो उसने बताया कि अपीलार्थी ने कई बार उसके साथ बलात्संग किया है।

12. डॉ. श्रीमती पुष्पा सोनटेके (अ.सा.-6) वह चिकित्सक हैं जिन्होंने अभियोक्त्री की चिकित्सकीय परीक्षण किया था और उन्होंने कथन किया है कि हाल ही में लैंगिक संबंध बनाए गए हैं। उन्होंने कथन किया कि हाइमन टूटी हुई पाई गई थी और उन्होंने अभियोक्त्री को आयु अवधारण करने हेतु रेडियोलॉजिस्ट के पास भेजा।

13. भरत लाल बंजारे (अ.सा.-3) शासकीय प्राथमिक शाला चोरभट्टी, रायपुर के सहायक शिक्षक हैं। उनका कथन है कि पुलिस ने उनसे अभियोक्त्री की जन्मतिथि के संबंध में विद्यालय दाखिल खारिज पंजी प्र.पी-12 जब्त किया है। उक्त पंजी में अभियोक्त्री की जन्मतिथि 10.08.2002 अंकित है तथा विद्यालय में उसका प्रवेश दिनांक 07.07.2008 को कक्षा 1 में हुआ है। प्रतिपरीक्षण में उन्होंने कथन किया है कि विद्यालय दाखिल पंजी में अभियोक्त्री की जन्मतिथि की प्रविष्टि प्रभारी शिक्षक अशोक कुमार साहू द्वारा की गई है, जो संबंधित समय पर पदस्थ थे। यह स्पष्ट है कि यह साक्षी न तो अभियोक्त्री की जन्मतिथि का लेखक है और न ही विद्यालय दाखिल खारिज पंजी का।

14. इस प्रकार, अभियोक्त्री की आयु के संबंध में अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य अर्थात् विद्यालय दाखिल खारिज पंजी में, इसके लेखक का परीक्षण नहीं कराया गया है। आक्षेपित निर्णय और उपरोक्त साक्षियों के कथनों के परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि पीड़िता की आयु के विषय में कोई विवाद नहीं है, जो अभिलेख पर विधिवत साबित हो चुका है और इस प्रकार, विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्षों में कि



जन्म तिथि प्रमाण पत्र (प्र.पी.-12) के आधार पर पीड़िता की आयु लगभग 14 वर्ष थी, हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

15. यह सुस्थापित सिद्धांत है कि न्यायालय बाल पीड़ित की साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि का आधार बना सकता है, यदि वह विश्वसनीय और सत्य है। संपुष्टि अभिलेख पर होना जरूरी नहीं है, बल्कि यह विवेक का नियम है। बाल पीड़ित की साक्ष्य का अवलंब लेते समय न्यायालय को जो सावधानी बरतनी चाहिए वह यह है कि साक्षी विश्वसनीय, सुसंगत होना चाहिए और उसके किसी बहकावे में आने या किसी प्रभाव में आने की संभावना नहीं होनी चाहिए। प्रस्तुत किया गया संस्करण अप्रतिरोध्य, विश्वसनीय और उत्कृष्ट गुणवत्ता वाला होना चाहिए, जो एकल साक्ष्य के आधार पर अपीलार्थी की दोषसिद्धि में सक्षम हो।

16. जब किसी व्यक्ति पर पोक्सो अधिनियम के अधीन दण्डनीय अपराध या भारतीय दण्ड संहिता में दण्डनीय बलात्संग के लिए आरोप विरचित किया जाता है, तो पीड़ित की आयु ऐसे आरोप को साबित करने के लिए महत्वपूर्ण और आवश्यक घटक होती है और जब बालक 18 वर्ष से कम, 12 वर्ष और 18 वर्ष से अधिक का होता है तो अपराध की गंभीरता बदल जाती है। पोक्सो अधिनियम की धारा 2(घ) के अनुसार "बालकों" का अर्थ अठारह वर्ष से कम आयु का कोई भी व्यक्ति है।

17. पोक्सो अधिनियम की धारा 29 में यह प्रावधान है कि न्यायालय यह मान लेगा कि अभियुक्त ने वह अपराध किया है जिसके लिए उस पर आरोप लगाया गया है, जब तक कि इसके विपरीत साबित न हो जाए। यद्यपि, यह अनुमान तभी लागू होगा जब अभियोजन अभियुक्त के विरुद्ध आरोप के संदर्भ में मूलभूत तथ्यों को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित कर देगा। अभियोजन द्वारा मूलभूत तथ्यों को साबित करने के बाद, अभियुक्त के विरुद्ध लगाए गए अनुमान को अभियोजन के साक्षियों को परीक्षण के माध्यम से बदनाम करके और अभियोजन के संस्करण में अंतराल या घटना की असंभावना को प्रदर्शित करके या संभाव्यता की प्रबलता द्वारा अनुमान का खंडन करने हेतु बचाव पक्ष के साक्ष्य का नेतृत्व करके खंडन किया जा सकता है।

18. **जरनैल सिंह विरुद्ध हरियाणा राज्य, (2013) 7 एससीसी 263** में प्रकाशित प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने बालकों की आयु अवधारित करने हेतु मार्गदर्शक सिद्धांत प्रतिपादित किए, जो निम्नानुसार हैं:

“22. अवयस्क के आयु अवधारण के विवाद्यक पर, केवल किशोर न्याय (बालकों की देखभाल और संरक्षण) नियम, 2007 (एतस्मिन पश्चात जिसे



2007 नियम कहा जाएगा) के नियम 12 का संदर्भ लेना होगा। पूर्वोक्त 2007 नियम किशोर न्याय (बालकों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 68(1) के अंतर्गत बनाए गए हैं। ऊपरोक्त उल्लिखित नियम 12 निम्नानुसार है:

“12. आयु के अवधारण में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया ? (1) विधि का उल्लंघन करने वाले बालक या किशोर से संबंधित प्रत्येक प्रकरण में, न्यायालय या बोर्ड या इन नियमों के नियम 19 में निर्दिष्ट समिति, उस प्रयोजन के लिए आवेदन करने की तिथि से तीस दिनों की अवधि के भीतर ऐसे किशोर या बालक या किशोर की आयु का अवधारण करेगी।

(2) न्यायालय या बोर्ड या, जैसा भी प्रकरण हो, समिति किशोर या बालक या, जैसा भी प्रकरण हो, विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर की किशोरता या अन्यथाता का निर्णय, प्रथम दृष्टया उसके शारीरिक रूप या दस्तावेजों, यदि उपलब्ध हो, के आधार पर करेगी और उसे संप्रेक्षण गृह या जेल भेजेगी।

(3) विधि का उल्लंघन करने वाले बालक या किशोर से संबंधित प्रत्येक प्रकरण में, आयु अवधारण जांच न्यायालय या बोर्ड या, जैसा भी प्रकरण हो, समिति द्वारा साक्ष्य प्राप्त करके की जाएगी –

(क) (i) मैट्रिकुलेशन या समकक्ष प्रमाण पत्र, यदि उपलब्ध हो; और उसके अभाव में;

(ii) प्रथम बार उपस्थित विद्यालय (प्ले विद्यालय के अतिरिक्त) से जन्म तिथि प्रमाण पत्र; और उसके अभाव में;

(iii) निगम या नगर पालिका प्राधिकरण या पंचायत द्वारा दिया गया जन्म प्रमाण पत्र;

(ख) और केवल उपर्युक्त खंड (क) के (i), (ii) या (iii) के अभाव में, विधिवत् गठित चिकित्सा बोर्ड से चिकित्सा राय मांगी जाएगी, जो किशोर या बालकों की आयु घोषित करेगा। यदि आयु का उचित आकलन नहीं किया जा सकता है, तो न्यायालय या बोर्ड या, जैसा भी प्रकरण हो, समिति, उनके द्वारा दर्ज किए जाने वाले कारणों से, यदि आवश्यक समझे, तो एक वर्ष के अंतर के भीतर बालकों या किशोर को उसकी आयु कम मानकर लाभ दे सकती है।





और ऐसे प्रकरण में आदेश पारित करते समय, उपलब्ध साक्ष्य या चिकित्सीय राय पर विचार करने के पश्चात, उसकी आयु के संबंध में निष्कर्ष दर्ज करेगा और खंड (क) (i), (ii), (iii) में से किसी में निर्दिष्ट साक्ष्य या उसके अभाव में खंड (ख) ऐसे बालक या विधि से संघर्षरत किशोर के संबंध में आयु का निर्णायक साक्ष्य होगा।

(4) यदि किशोर या बालक या विधि से संघर्षरत किशोर की आयु अपराध की तिथि को 18 वर्ष से कम पाई जाती है, तो उपनियम (3) में निर्दिष्ट किसी निर्णायक साक्ष्य के आधार पर न्यायालय या बोर्ड या, जैसा भी प्रकरण हो, समिति अधिनियम और इन नियमों के प्रयोजनार्थ आयु बताते हुए और किशोर होने या अन्यथा की स्थिति घोषित करते हुए लिखित रूप में आदेश पारित करेगी और आदेश की एक प्रतिलिपि ऐसे किशोर या संबंधित व्यक्ति को दी जाएगी।

(5) सिवाय इसके कि जहां आगे की जांच या अन्यथा अपेक्षित हो, अन्य बातों के साथ-साथ, अधिनियम की धारा 7 क, धारा 64 और इन नियमों के अनुसार, इस नियम के उप-नियम (3) में निर्दिष्ट प्रमाण पत्र या कोई अन्य दस्तावेजी साक्ष्य की जांच करने और प्राप्त करने के बाद न्यायालय या बोर्ड द्वारा आगे की जांच नहीं की जाएगी।

(6) इस नियम में निहित प्रावधान उन निपटाए गए प्रकरणों पर भी लागू होंगे, जहां किशोर की स्थिति उप-नियम (3) और अधिनियम में निहित प्रावधानों के अनुसार निर्धारित नहीं की गई है, जिसमें विधि से संघर्षरत किशोर के हित में उचित आदेश पारित करने के लिए अधिनियम के अधीन दण्ड का प्रावधान करना आवश्यक है।

23. यद्यपि नियम 12 केवल विधि से संघर्षरत बालक की आयु अवधारित करने के लिए ही सख्ती से लागू है, फिर भी हमारा विचार है कि उपरोक्त वैधानिक प्रावधान आयु अवधारित करने का आधार होना चाहिए, यहां तक कि अपराध का शिकार बालक के लिए भी।

अतः, हमारे विचार में, जहां तक अल्पसंख्यक के विवादकों का संबंध है, विधि से संघर्षरत बालक और अपराध का शिकार बालक के बीच शायद ही कोई अंतर है। इसलिए, हमारे विचार से, अभियोक्त्री अ.सा.-6 की आयु अवधारित करने के लिए 2007 के नियम 12 को लागू करना न्यायसंगत और युक्तियुक्त होगा। आयु का निर्णायक रूप से अवधारण करने का तरीका, ऊपर उद्धृत नियम 12 के उप-नियम (3) में व्यक्त किया गया है।





उपरोक्त प्रावधान के अधीन, बालक की आयु नियम 12(3) में प्रतिपादित कई विकल्पों में से, पहले उपलब्ध आधार को अपनाकर सुनिश्चित की जाती है। यदि नियम 12(3) के अंतर्गत विकल्पों की योजना में, कोई विकल्प पूर्ववर्ती खंड में व्यक्त किया गया है, तो इसका प्रभाव बाद के खंड में व्यक्त विकल्प पर अधिक होगा। उपलब्ध उच्चतम श्रेणी का विकल्प, निर्णायक रूप से अवयस्क की आयु अवधारित करेगा। नियम 12(3) की योजना में, संबंधित बालकों का मैट्रिकुलेशन (या समकक्ष) प्रमाण पत्र उच्चतम श्रेणी का विकल्प है। यदि उक्त प्रमाण पत्र उपलब्ध है, तो किसी अन्य साक्ष्य पर अवलंब नहीं लिया जा सकता है। केवल उक्त प्रमाण पत्र की अनुपस्थिति में, नियम 12(3) बालकों द्वारा पहली बार भाग लिए गए विद्यालय में दर्ज जन्म तिथि पर विचार करने की परिकल्पना करता है। यदि जन्म तिथि की ऐसी प्रविष्टि उपलब्ध है, तो उसमें दर्शाई गई जन्म तिथि को अंतिम और निर्णायक माना जाएगा, और किसी अन्य सामग्री का अवलंब नहीं लिया जाएगा। केवल ऐसी प्रविष्टि के अभाव में, नियम 12(3) किसी निगम या नगरपालिका प्राधिकरण या पंचायत द्वारा जारी जन्म प्रमाण पत्र पर भरोसा करने का प्रावधान करता है। फिर भी, यदि ऐसा प्रमाण पत्र उपलब्ध है, तो संबंधित बालकों की आयु अवधारित करने के लिए किसी भी अन्य सामग्री पर विचार नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि उक्त प्रमाण पत्र ही बालकों की आयु का निर्णायक रूप से अवधारण करेगा।

उपर्युक्त में से किसी के अभाव में ही नियम 12(3) में संबंधित बालकों की आयु का अवधारण चिकित्सीय अभिमत के आधार पर किया जाता है।

19. अभियोक्त्री की आयु के संबंध में अभियोजन ने मुख्यतः अभियोक्त्री के विद्यालय दाखिल खारिज पंजी (प्र.पी.-12) का अवलंब लिया है, जिसे पुलिस ने विद्यालय से जब्त किया है तथा सहायक शिक्षक भरत लाल बंजारे (अ.सा.-3) द्वारा प्रमाणित किया गया है, जिसमें पीड़िता की जन्म तिथि 10.08.2002 अंकित है। यद्यपि प्रतिपरीक्षण में उसने स्वीकार किया है कि वह प्रवेश के समय पीड़िता के विद्यालय में उपस्थित नहीं थी। दाखिल खारिज पंजी एक लोक दस्तावेज है, जिसे लोक सेवक अपने पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में संधारित करता है। दाखिल खारिज पंजी में की गई प्रविष्टि लोक सेवक द्वारा की गई है, जिसे एक लोक सेवक द्वारा दूसरे लोक सेवक को उचित अभिरक्षा में दिया गया है। किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की धारा 94 के अनुसार दाखिल खारिज पंजी विद्यालय द्वारा जारी किया गया दस्तावेज है, जो प्रथम श्रेणी दस्तावेजों के अंतर्गत आता है। बचाव पक्ष ने जन्म तिथि से इंकार करने के लिए कोई मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है, इसलिए पीड़िता की जन्म तिथि



10.08.2002 को नकारने का कोई कारण नहीं है, इसलिए विचारण न्यायालय ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया है कि पीड़िता की जन्म तिथि 10.08.2002 है और घटना की तारीख को वह 16 वर्ष से कम आयु की अवयस्क थी और उसकी आयु लगभग 14 वर्ष थी।

20. वर्तमान अपील में अवधारणीय विवादक यह है कि क्या पीड़िता/अभियोक्त्री का साक्ष्य स्वीकार करने योग्य है और क्या अभियोजन ने अपीलार्थी के प्रकरण को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित कर दिया है।

21. यह देखना उचित है कि लैंगिक हमला/बलात्संग के प्रकरणों में पीड़िता की एकमात्र साक्ष्य के आधार पर अभियुक्त को सिद्धदोष किया जा सकता है या नहीं, यह प्रश्न अब सुसंगत नहीं रह गया है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने अनेक निर्णयों में इस विवादक पर विचार किया है और अभिनिर्धारित किया है कि यदि अभियोजन की एकमात्र साक्ष्य विश्वसनीय पाई जाती है तो वह अभियुक्त की दोषसिद्धि का एकमात्र आधार हो सकती है और इस तरह के प्रकरणों में पीड़िता की विश्वसनीय साक्ष्य स्वीकार किए जाने योग्य है।

22. जहां तक अपराध की तिथि पर पीड़िता की आयु का प्रश्न है, वह इस अप्रिय घटना के समय 14 वर्ष की थी। अभियोजन ने बाद में यह साबित कर दिया है कि कथित लैंगिक हमले के समय पीड़िता अवयस्क थी और जब अभियुक्त द्वारा उसका लैंगिक हमला किया गया था तब पीड़िता की आयु 16 वर्ष से कम थी।

23. इसके अतिरिक्त, पीड़िता द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन किए गए कथन के परिशीलन से यह पाया गया कि उसने स्पष्ट रूप से कथन किया है कि अपीलार्थी ने अपने शैतानी कृत्य से उसका बलात्संग किया। न्यायालय के समक्ष दिए गए अपने कथन में भी उसने यही कहा है कि अपीलार्थी उसे धमकी देकर अपनी बाइक में अपने भाई के घर नवागांव ले गया और कई बार उसके साथ बलात्संग किया। इसलिए, पीड़िता की साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है, जो सुसंगत और विश्वसनीय है और जिसमें सत्यता की झलक मिलती है। पीड़िता के परीक्षण के समय उसकी आयु केवल 14 वर्ष थी और 14 वर्षीय बालिका की साक्ष्य में उपस्थित सूक्ष्म भिन्नता समझ में आती है, जो वास्तव में उसके साथ हुई घटना की जटिलता और भयावहता को समझने के लिए संघर्ष कर रही है।

24. अभियोक्त्री द्वारा दी गई साक्ष्य के परिशीलन से, जो प्रतिपरीक्षण में भी यथावत रही, यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि अपीलार्थी द्वारा अपराध किए जाने का वर्णन स्पष्ट और असंदिग्ध शब्दों में किया गया है और प्रतिपरीक्षण के दौरान उसकी साक्ष्य सुसंगत रही है। अभियोक्त्री ने स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है कि



अपीलार्थी ने उसके साथ बलात्संग किया था और उसके बाद उसे इस घटना के विषय में किसी को न बताने की धमकी दी थी। इसके अतिरिक्त, पीड़िता/अभियोक्त्री का साक्ष्य के स्पष्ट विवेचन पर, अपीलार्थी की ओर से उठाया गया यह तर्क कि अभियोक्त्री एक प्रशिक्षित साक्षी है, स्वीकार नहीं किया जा सकता है और इसमें कोई बल नहीं है। अपीलार्थी अभियोक्त्री का साक्ष्य का खंडन करने में विफल रहा है, जो गहन प्रतिपरीक्षण के अधीन होने के बावजूद चुनौती नहीं दी गई है। अब यदि हम साक्षियों के कथनों पर विचार करें तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि अपीलार्थी के विरुद्ध आरोपित अपराध से यह साबित होता है कि अपीलार्थी ने ही अपराध किया है।

25. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **राजस्थान राज्य विरुद्ध ओम प्रकाश, (2002) 5 एससीसी 745** में प्रकाशित बाल बलात्संग के प्रकरण में इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार किया, तथा अपीलार्थी की दोषसिद्धि को यथावत रखते हुए तथा उस संबंध में उच्च न्यायालय के निर्णय को पलटते हुए, पूर्व निर्णयों का अवलंब लिया तथा निम्नानुसार अवधारित किया:

"13. भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध हेतु दोषसिद्धि बलात्संग पीड़िता की एकमात्र साक्ष्य पर आधारित हो सकती है, यह एक सुस्थापित प्रस्ताव है। पंजाब राज्य विरुद्ध गुरमीत सिंह [(1996) 2 एससीसी 384] में, महाराष्ट्र राज्य विरुद्ध चंद्र प्रकाश केवलचंद जैन [(1990) 1 एससीसी 550] का संदर्भ देते हुए, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए कि लैंगिक हमला के अधीन एक स्त्री या बालिका अपराध में सहयोगी नहीं है, बल्कि किसी अन्य व्यक्ति की वासना का शिकार है और उसके साक्ष्य को एक निश्चित मात्रा में संदेह के साथ परखना अनुचित और अवांछनीय है, उसके साथ ऐसा व्यवहार करना जैसे कि वह एक सहयोगी हो। डॉ. न्यायमूर्ति ए.एस. आनंद (जैसा कि तब न्यायाधिपति थे) द्वारा उक्त निर्णय में यह भी अवधारित किया गया है कि स्त्रियों की अंतर्निहित शर्म और लैंगिक आक्रामकता के आक्रोश को छिपाने की प्रवृत्ति ऐसे कारक हैं जिसे न्यायालयों को अनदेखा नहीं करना चाहिए। ऐसे प्रकरणों में पीड़िता की साक्ष्य महत्वपूर्ण है और जब तक ऐसे कोई बंधनकारी कारण न हों, जिसके लिए उसके कथन की संपुष्टि की आवश्यकता हो, न्यायालयों को किसी अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए लैंगिक हमला की पीड़िता की साक्ष्य के आधार पर कार्रवाई करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए, जहाँ उसकी साक्ष्य विश्वास उत्पन्न करती है और विश्वसनीय पाई जाती है। ऐसे प्रकरणों



में, एक नियम के रूप में, उस का अवलंब लेने से पूर्व उसके कथन की संपुष्टि की माँग करना चोट पर नमक छिड़कने के समान है।

14. हिमाचल प्रदेश राज्य विरुद्ध ज्ञान चंद [(2001) 6 एससीसी] में न्यायमूर्ति लाहोटी ने पीठ की ओर से बोलते हुए कहा कि न्यायालय को पहले प्रस्तुत किए गए साक्ष्य और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के विश्वसनीय आशय का आकलन करना चाहिए। यदि न्यायालय प्रस्तुत साक्ष्य विश्वास किए जाने योग्य पाता है, तो साक्ष्य को स्वीकार किया जाना चाहिए और उस पर कार्रवाई की जानी चाहिए, यद्यपि अन्य साक्षी भी उपलब्ध हो सकते हैं, जिनकी परीक्षण कराया जा सकता था, परंतु उनका परीक्षण नहीं कराया गया।"

26. न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने बलात्संग के प्रकरणों में पीड़िता पर चोटों की अनुपस्थिति और संपुष्टिकारक साक्ष्य के महत्व पर अपनी टिप्पणियों का दस्तावेजीकरण करते हुए **रफीक विरुद्ध उत्तर प्रदेश राज्य (1980) 4 एससीसी 262** में प्रकाशित अपने प्रसिद्ध निर्णय में सुस्पष्ट रूप से निम्नानुसार अवधारित किया है:

"5. अभियोक्त्री का साक्ष्य पर न्यायिक निर्भरता के लिए एक शर्त के रूप में संपुष्टि विधि का प्रकरण नहीं है, बल्कि दी गई परिस्थितियों में विवेक का मार्गदर्शन है। वास्तव में, जगह-जगह, आयु-दर-आयु, भिन्न-भिन्न जीवन-शैली और व्यवहार संबंधी जटिलताओं से, मौखिक और परिस्थितिजन्य तथ्यों के एक निश्चित समूह से निष्कर्ष निकालना मृत एकरूपता के साथ नहीं बल्कि यथार्थवादी विविधता के साथ किया जाना चाहिए, ताकि इस क्षेत्र में विधि के शासन के रूप में कठोरता एक नए प्रकार के पूर्ववर्ती अत्याचार के माध्यम से प्रस्तुत न हो। हमलावर या पीड़ित के व्यक्ति पर चोटों की उपस्थिति या अनुपस्थिति के संबंध में भी यही परिशीलन सही है।

6. जब बलात्कारी अपनी अनैतिक गतिविधियों में आनंद ले रहे हों और आधी मानव जाति – स्त्री जाति – अपने दुर्भाग्यपूर्ण भाग्य के विरुद्ध विरोध कर रही हो, जब कोई भी सम्मानित स्त्री नहीं होगी किसी अन्य पर बलात्संग का आरोप लगाना क्योंकि वह ऐसा करके अपनी सबसे प्रिय चीज़ का बलिदान कर रही है, हम किसी जीवाश्म सूत्र से चिपके नहीं रह सकते और संपुष्टि करने



वाली साक्ष्य पर ज़ोर नहीं दे सकते, भले ही समग्र रूप से देखा जाए, पीड़िता द्वारा बताई गई बात न्यायिक विवेक में संभावित प्रतीत होती है।"

27. **बी.सी.देवा विरुद्ध कर्नाटक राज्य(2007) 12 एससीसी 122** में प्रकाशित प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने इस तथ्य के बावजूद कि अभियोक्त्री के शरीर पर कोई चोट नहीं पाई गई थी, फिर भी उसके कथन को विश्वसनीय और भरोसेमंद पाते हुए उच्चतम न्यायालय ने अभियुक्त की दोषसिद्धि को यथावत रखा। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि:

"18. यह तर्क कि अभियुक्त या अभियोक्त्री के शरीर पर कोई चोट के निशान नहीं पाए गए, इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचाती कि अभियुक्त ने अभियोक्त्री के साथ बलपूर्वक लैंगिक संबंध नहीं बनाए हैं। यद्यपि अभियोक्त्री की चिकित्सा जांच से संबंधित स्त्री रोग विशेषज्ञ की रिपोर्ट में लैंगिक संबंध के किसी भी साक्ष्य का प्रकट नहीं हुआ है, फिर भी चिकित्सा साक्ष्य की अनुपस्थिति में भी अभियोक्त्री की मौखिक साक्ष्य, जो कि ठोस, विश्वसनीय, ठोस और भरोसेमंद पाई गई है, को स्वीकार किया जाना चाहिए।"

28. इस प्रकार, यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि बलात्संग के प्रकरण में अभियोक्त्री का साक्ष्य की संपुष्टि आवश्यक नहीं है, और यह अभियुक्त के अपराध को साबित करने के लिए अनिवार्य शर्त नहीं है। अभियोक्त्री का साक्ष्य, यदि सुस्थापित और विश्वसनीय है, तो अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए अपने आप में पर्याप्त है।

29. यह कहना अनुचित नहीं होगा कि बाल बलात्संग के प्रकरणों से निपटान हेतु न्यायालयों के लिए संवेदनशील दृष्टिकोण रखना आवश्यक है। अभियोजन ने लैंगिक अपराधों से बालकों के संरक्षण (पोक्सो) अधिनियम, 2012 के कठोर प्रावधानों को लागू करते हुए, व्यक्ति के विरुद्ध आरोपों को सावधानीपूर्वक निर्धारित किया। इसके अतिरिक्त, उसके कृत्यों की क्रूरता और गंभीरता को दर्शाते हुए, उस पर बलात्संग के दंडात्मक विधियों के अधीन भी आरोप लगाए गए।

30. **अलख आलोक श्रीवास्तव विरुद्ध भारत संघ व अन्य (2018) 17 एससीसी 291** के प्रकरण में, पैरा 14 और 20 में, यह निम्नानुसार अवधारित किया गया है:

"14. सर्वप्रथम यह स्पष्ट रूप से कहा जाना चाहिए कि पोक्सो अधिनियम एक लिंग-तटस्थ विधि है। इस अधिनियम को विभिन्न अध्यायों और भागों में



विभाजित किया गया है। अधिनियम के अध्याय ॥ का शीर्षक "बालकों के विरुद्ध लैंगिक अपराध" है, जिसे पाँच भागों में विभाजित किया गया है। उक्त अध्याय के भाग क में दो खंड हैं, अर्थात् धारा 3 और धारा 4। धारा 3 "प्रवेशन लैंगिक हमला" के अपराध को परिभाषित करती है जबकि धारा 4 उक्त अपराध के लिए दंड निर्धारित करती है। इसी प्रकार, उक्त अध्याय के भाग ख का शीर्षक "गुरुतर प्रवेशन लैंगिक हमला और उसके लिए दंड" है, जिसमें दो खंड हैं, अर्थात् धारा 5 और धारा 6। धारा 5 की विभिन्न उपधाराएँ विभिन्न स्थितियों, परिस्थितियों और व्यक्तियों की श्रेणियों से विस्तृत रूप से निपटान करती हैं, जहाँ प्रवेशन लैंगिक हमले का अपराध गुरुतर प्रवेशन लैंगिक हमले के अपराध का स्वरूप ले लेगा। हमला धारा 5(के), विशेषतः, बालकों की मानसिक स्थिरता पर बल देते हुए यह निर्धारित करती है कि जब कोई अपराधी बालकों की मानसिक या शारीरिक अक्षमता का लाभ उठाकर बालकों पर लैंगिक हमला करता है, तो यह गुरुतर लैंगिक हमला का अपराध माना जाएगा।

"20. बालकों के विषय में व्यक्त करते हुए, एम.सी. मेहता विरुद्ध टी.एन. राज्य (1996) 6 एस.सी.सी. 756 में तीन न्यायाधीशों की पीठ ने व्यक्त किया, "1. ... "बालक मनुष्य का पिता है"। एक बहादुर और जीवंत व्यक्ति के पिता बनने के लिए, बालकों को उसके जीवन के प्रारंभिक वर्षों में अच्छी तरह से तैयार किया जाना चाहिए। उसे शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, मनुष्य और सामग्रियों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए और ऐसे वातावरण में खेलना चाहिए कि आयु बढ़ने पर, वह एक मिशन वाला व्यक्ति पाया जाए, एक ऐसा व्यक्ति जो समाज के लिए मायने रखता है।"

31. इसके अतिरिक्त यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि "बालक हमारे देश के अनमोल मानव संसाधन हैं; वे देश का भविष्य हैं। भविष्य की आशा उन पर टिकी है। परंतु दुर्भाग्यपूर्ण, हमारे देश में, बालिकाएँ अत्यधिक असुरक्षित स्थिति में हैं। उनके शोषण के विभिन्न तरीके हैं, जिनमें लैंगिक हमला और/या लैंगिक दुर्व्यवहार शामिल हैं। हमारे विचार में, इस तरह से बालकों का शोषण मानवता और समाज के विरुद्ध अपराध है।"

32. इसलिए, बालकों और विशेष रूप से बालिकाएँ पूर्ण सुरक्षा के पात्र हैं और उन्हें शहरी या ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक देखरेख और संरक्षण की आवश्यकता है। जैसा कि इस न्यायालय ने राजस्थान राज्य विरुद्ध ओम प्रकाश, (2002) 5 एससीसी 745 के प्रकरण में अवधारित और अभिनिर्धारित किया है, बालकों



को विशेष देखरेख और संरक्षण की आवश्यकता है और ऐसे प्रकरणों में, इन बालकों को उचित विधिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए न्यायालयों के कंधों पर जिम्मेदारी अधिक है। **निपुण सक्सेना विरुद्ध भारत संघ, (2019) 2 एससीसी 703** के प्रकरण में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि लैंगिक शोषण का शिकार होने वाले अवयस्क को वयस्क पीड़ित से भी अधिक सुरक्षा की आवश्यकता है क्योंकि वयस्क पीड़ित वयस्क होने के बावजूद समाज द्वारा दिए जाने वाले सामाजिक बहिष्कार और मानसिक आघात को झेलने में सक्षम हो सकता है, परंतु अवयस्क पीड़ित के लिए ऐसा करना कठिन होगा। अवयस्क पीड़ितों के विरुद्ध अधिकांश अपराधों की रिपोर्ट भी नहीं की जाती है क्योंकि प्रायः अपराध करने वाला पीड़ित के परिवार का सदस्य या करीबी मित्र होता है। अतः बालकों को अतिरिक्त सुरक्षा की आवश्यकता होती है। इसलिए, ऐसे अभियुक्त के प्रति कोई नरमी नहीं बरती जा सकती जिसने पोक्सो अधिनियम, 2012 के अधीन अपराध किया है और विशेषतया तब जब न्यायालय के समक्ष पर्याप्त साक्ष्यों से यह साबित हो चुका हो।

33. वर्तमान प्रकरण में यह विचार करने योग्य है कि अभियुक्त ने एक अवयस्क का बलात्संग किया था, जिसकी आयु लगभग 14 वर्ष थी, जो अभियुक्त की मानसिक स्थिति या मानसिकता को दर्शाता है। इसलिए, अभियुक्त किसी भी प्रकार की सहानुभूति और/या किसी भी प्रकार की नरमी का पात्र नहीं है।

34. इसके अतिरिक्त यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यद्यपि लैंगिक अपराधों से संबंधित प्रकरणों में पीड़िता का एकमात्र साक्ष्य सामान्यतः अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त माना जाता है, परंतु यदि अभियोक्त्री का साक्ष्य पहचानी गई खामियों और कमियों के कारण अविश्वसनीय और अपर्याप्त पाई जाती है, तो दोषसिद्धि को यथावत नहीं रखा जा सकता है। यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया:

“31. इसमें कोई संदेह नहीं है कि बलात्संग के अपराध के लिए किसी अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए अभियोक्त्री का एकमात्र साक्ष्य पर्याप्त है, बशर्ते कि वह विश्वास उत्पन्न करे और पूर्णतः विश्वसनीय, निष्कलंक और उत्कृष्ट गुणवत्ता वाला प्रतीत हो। परंतु, इस प्रकरण में अभियोक्त्री के साक्ष्य में कई खामियां हैं, जिन्हें पहले ही यहां प्रस्तुत किया जा चुका है, जिससे यह ज्ञात होता है कि उसका साक्ष्य उस श्रेणी में नहीं आता है और अपीलार्थी को उक्त अपराधों की दोषसिद्धि हेतु उस का अवलंब नहीं लिया जा सकता है।

32. वास्तव में उसके धारा 164 के कथन, (दण्ड प्रक्रिया संहिता) की धारा 161 के कथन, प्रथम सूचना रिपोर्ट और न्यायालयिक कथन में कई महत्वपूर्ण भिन्नताएं हैं। इसलिए, उसके साक्ष्य को स्वतंत्र रूप से संपुष्ट करना आवश्यक था, जो वे रितु, उसकी बहन या बिमला देवी का परीक्षण कराकर कर सकते थे, जो



घटना के समय घर में उपस्थित थीं, उसके कथित अपहरण के विषय में। अभिलेख से ज्ञात होता है कि बिमला देवी को साक्षी के तौर पर प्रस्तुत किया गया था, परंतु उनसे परीक्षण नहीं कराया गया और बाद में शासकीय अधिवक्ता ने इस आधार पर उन्हें छोड़ दिया कि अपीलार्थी ने उन्हें अपने पक्ष में कर लिया है।

35. राज्य (एनसीटी दिल्ली) विरुद्ध पंकज चौधरी, {(2019) 11 एससीसी 575} के प्रकरण में, यह अवधारित किया गया एवं अभिनिर्धारित किया गया कि एक सामान्य नियम के रूप में, यदि विश्वसनीय हो, तो अभियुक्त की दण्ड बिना किसी संपुष्टि के, केवल साक्ष्य के आधार पर हो सकती है। यह भी देखा गया और माना गया कि अभियोक्त्री की एकमात्र साक्ष्य पर न्यायालय को केवल उपधारणाओं और अनुमानों के आधार पर संदेह नहीं करना चाहिए। पैरा 29 में, यह अवधारित किया गया एवं अभिनिर्धारित किया गया कि:

“29. अब यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि अभियोक्त्री की एकमात्र साक्ष्य पर दोषसिद्धि यथावत रखी जा सकती है यदि यह विश्वास जगाती है। [विष्णु विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य [विष्णु विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य, (2006) 1 एससीसी 283]। इस न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला द्वारा यह सुस्थापित है कि विधि या अभ्यास का कोई नियम नहीं है कि अभियोक्त्री के साक्ष्य पर संपुष्टि के बिना अवलंब नहीं लिया जा सकता है और इस प्रकार यह अभिनिर्धारित किया गया है कि बलात्संग के प्रकरण में दोषसिद्धि के लिए संपुष्टि अनिवार्य नहीं है। यदि पीड़िता के साक्ष्य में कोई मूलभूत कमी नहीं है और “संभावना कारक” इसे विश्वास के अयोग्य नहीं बनाता है, तो सामान्य नियम के रूप में, चिकित्सा साक्ष्य के अतिरिक्त संपुष्टि पर बल देने का कोई कारण नहीं है, जहां प्रकरण की परिस्थितियों को विचार में रखते हुए, चिकित्सा साक्ष्य के विश्वसनीय होने की आगे उम्मीद की जा सकती है। [राजस्थान राज्य विरुद्ध एन.के. [राजस्थान राज्य विरुद्ध एन.के., (2000) 5 एससीसी 30]

36. माननीय उच्चतम न्यायालय ने उत्तर प्रदेश राज्य विरुद्ध सोनू कुशवाहा (2023) 7 एससीसी 475 के प्रकरण में निम्नानुसार अवधारित किया है:

12. पोक्सो अधिनियम को विभिन्न प्रकार के बाल हमला के अपराधों के लिए अधिक कठोर दण्ड प्रदान करने के लिए अधिनियमित किया गया था और इसीलिए पोक्सो अधिनियम की धारा 4, 6, 8 व 10 में बालकों पर लैंगिक हमलों की विभिन्न



श्रेणियों के लिए न्यूनतम दंड निर्धारित किए गए हैं। अतः धारा 6, अपनी स्पष्ट भाषा में, न्यायालय को कोई विवेक नहीं छोड़ती है और विचारण न्यायालय द्वारा की गई न्यूनतम दण्ड को लागू करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं है। जब कोई दंडात्मक प्रावधान "इससे कम नहीं होगा ..." वाक्यांश का उपयोग करता है, तो न्यायालय धारा का उल्लंघन नहीं कर सकते हैं और कम दण्ड नहीं दे सकते हैं। न्यायालय ऐसा करने में शक्तिहीन हैं जब तक कि कोई विशिष्ट वैधानिक प्रावधान न हो जो न्यायालय को कम दण्ड देने में सक्षम बनाता हो। यद्यपि, हमें पोक्सो अधिनियम में ऐसा कोई प्रावधान नहीं मिला। अतः इस तथ्य के बावजूद कि उत्तरवादी उच्च न्यायालय द्वारा संशोधित दण्ड भुगतने के बाद जीवन में आगे बढ़ गया है, उसके प्रति कोई नरमी दिखाने का प्रश्न ही नहीं उठता। इस तथ्य के अतिरिक्त कि विधि न्यूनतम दण्ड का प्रावधान करता है, उत्तरवादी द्वारा किया गया अपराध बहुत ही जघन्य है जिसके लिए बहुत कठोर दण्ड की आवश्यकता है। पीड़ित/बालकों के मन पर इस घृणित कृत्य का प्रभाव आजीवन रहेगा। इसका प्रभाव पीड़ित के स्वस्थ विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला है। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि घटना के समय पीड़ित की आयु बारह वर्ष से कम थी। इसलिए, हमारे पास उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को अपास्त करने और विचारण न्यायालय के निर्णय को बहाल करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं है।

37. लैंगिक अपराध की शिकार पीड़िता के साक्ष्य पर विचार करते समय न्यायालय को घटना का लगभग सटीक विवरण देने की आवश्यकता नहीं होती। इसके बजाय, पीड़िता को घटनाओं के विषय में अपनी स्मरण शक्ति के आधार पर अपना कथन देने की स्वीकृति देने पर बल दिया जाता है, जहाँ तक उसे याद रखना संभव हो। यदि न्यायालय ऐसे साक्ष्य को विश्वसनीय और संदेह से मुक्त मानता है, तो उस कथन की संपुष्टि करने पर शायद ही कोई बल दिया जाता है। **हिमाचल प्रदेश राज्य विरुद्ध श्री कांत शेखर (2004) 8 एससीसी 153** में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अवधारित किया:“

“21. यह सुस्थापित है कि बलात्संग के अपराध की शिकार होने की शिकायत करने वाली अभियोक्त्री अपराध के बाद सह-अपराधी नहीं है। विधि का कोई नियम नहीं है कि तात्त्विक विवरणों में संपुष्टि के बिना उसकी साक्ष्य पर कार्रवाई नहीं की जा सकती। वह आहत साक्षी की तुलना में उच्च स्थान पर है। बाद के प्रकरण में, शारीरिक रूप से चोट है, जबकि पहले प्रकरण में यह शारीरिक के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक भी है। यद्यपि, यदि तथ्यों के आधार पर न्यायालय को अभियोक्त्री के कथन को उसके वास्तविक मूल्य पर स्वीकार



करना कठिन प्रतीत होता है, तो वह प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य साक्ष्यों की खोज कर सकती है, जो उसकी साक्ष्य को आश्वासन दे सके। सहयोगी के संदर्भ में समझे जाने वाले आश्वासन, संपुष्टि के बिना, पर्याप्त होंगे।”

38. इसी आधार पर, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **शिवशरणप्पा व अन्य विरुद्ध कर्नाटक राज्य, (2013) 5 एससीसी 705** में निम्नानुसार अवधारित किया:

“17. इस प्रकार, यह विधि में सुस्थापित है कि न्यायालय बाल साक्षी की साक्ष्य का अवलंब ले सकता है और यह दोषसिद्धि का आधार बन सकता है यदि वह विश्वसनीय, सत्य है और अभिलेख पर प्रस्तुत अन्य साक्ष्यों द्वारा संपुष्टि की जाती है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि विवेक के नियम के रूप में, न्यायालय अभिलेख पर प्रस्तुत अन्य विश्वसनीय साक्ष्यों से संपुष्टि देखना वांछनीय समझता है। साक्षी के एकमात्र कथन का अवलंब लेने के लिए लागू होने वाले सिद्धांत, अर्थात्, यह कथन सत्य और उचित है और गुणवत्तापूर्ण है और केवल संपुष्टि की कमी के आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है, एक बाल साक्षी पर लागू होता है जो सक्षम है और जिसका संस्करण विश्वसनीय है।”

39. वर्तमान प्रकरण में, पीड़िता अपने कथन में एकरूप थी और उसने दावा किया है कि अपीलार्थी ने उसे धुमाने के बाद अकेला पाकर उसके साथ लैंगिक हमला किया। अभियोक्त्री का कथन प्रारंभ से अंत तक, प्रारंभिक कथन से लेकर मौखिक साक्ष्य तक, अभियोजन के प्रकरण में कोई संदेह उत्पन्न किए बिना एकरूप रहा है। इस प्रकार, इस प्रकरण में, इसमें कोई संदेह नहीं था कि अधिकार और विश्वास की स्थिति में होने के कारण, अभियुक्त ने पीड़िता जो लगभग 14 वर्ष की अवयस्क है, के साथ बलात्संग किया था। दोषी की दोषीता पर पीड़िता के मौखिक साक्ष्य ने उसके अपराध की ओर स्पष्ट रूप से इंगित करते हुए विश्वसनीयता प्राप्त की। अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य की विवेचना करने और इस निष्कर्ष पर पहुंचने पर कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363, 366 व 376 (2) (ढ़) के अधीन अपीलार्थी का अपराध निर्णायक रूप से साबित हुआ है।

40. पूर्वगामी विमर्श के दृष्टिगत, हमारे विचार में, अभियोजन ने अपीलार्थी के अपराध को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित किया है। विधि की स्थिति में कोई उल्लंघन नहीं है और इस प्रस्ताव के साथ कोई विवाद नहीं हो सकता है कि जब अभियोक्त्री का साक्ष्य विश्वसनीय, भरोसेमंद, निर्विवाद है और विश्वास उत्पन्न करती है; अपीलार्थी के दण्ड को केवल इसी आधार पर यथावत रख जा सकता है।



41. अभियोजन ने अभियुक्त के आरोप को संदेह से परे साबित करने के लिए महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत किए, जिससे उसके अपराध के विषय में अस्पष्टता की कोई स्थान नहीं बचा। फलस्वरूप, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को दिए गए दण्डादेश में भी किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। अतः दिनांक 02.03.2020 के निर्णय एवं दण्डादेश को यथावत रखा जाता है। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को न्यूनतम दण्ड, अर्थात् 10 वर्ष के कारावास से दण्डित किया है, अतः कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाता है। तदनुसार, अपील **खारिज** की जाती है।

42. अपीलार्थी को गिरफ्तारी की तारीख 23.03.2017 से जेल में निरुद्ध होने की सूचना दी गई है। उसे विचारण न्यायालय द्वारा पारित दण्डादेश भुगतने हेतु निर्देशित किया जाता है।

43. विचारण न्यायालय के अभिलेख सहित इस निर्णय की प्रतिलिपि विचारण न्यायालय को अनुपालनार्थ और आवश्यक जानकारी हेतु अविलंब प्रेषित की जाए।



सही/-

(अरविंद कुमार वर्मा)

न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।